International Journal of Applied Research 2020; 6(7): 76-78

ISSN Print: 2394-7500
ISSN Online: 2394-5869
Impact Factor: 5.2
IJAR 2020; 6(7): 76-78
www.allresearchjournal.com
Received: 07-05-2020
Accepted: 10-06-2020

रईसा खातुन
शोधार्थी, गृहविज्ञान विभाग, जे.पी. विश्वविद्यालय, छपरा, बिहार, भारत

Corresponding Author:
रईसा खातुन
शोधार्थी, गृहविज्ञान विभाग, जे.पी. विश्वविद्यालय, छपरा, बिहार, भारत

परिवार के द्वारा बच्चों के शैक्षणिक एवं सामजिक विकास एक अध्ययन

रईसा खातुन

सारांश
किसी भी राष्ट्र अथवा समाज के विकास का सर्वाधिक महत्वपूर्ण साधन मानव है। मानव द्वारा उपलब्ध संसाधन का उपयोग कर विकास के मार्ग को प्रशस्त किया जाता है। संसाधन का उपयोग किस तरह किया जाना है और कौन सा संसाधन किस कार्य के लिए उपयोगी है इसका ज्ञान शिक्षा द्वारा प्राप्त होता है। जिसमें परिवार, माता–पिता, समाज, विद्यालय आदि की अहम भूमिका होती है। शिक्षा का प्रयोग व्यापक सन्दर्भ में किया जाता है। शिक्षा एक प्रक्रिया, प्रणाली, अध्ययन विषय तथा प्राप्त अनुभव और ज्ञान भी है। मनुष्य जीवन से लेकर मृत्यु तक जो किसी रूप में सीखता है अर्थात् नवीन ज्ञान प्राप्त करता है। वह शिक्षा के अन्तर्गत आता है। शिक्षा रचनात्मक गतिशील तथा जीवन्त प्रक्रिया है। शिक्षा के द्वारा निःस्वार्थ प्रेम, हृदय की शुद्धता, श्रेष्ठ के प्रति आदर, सत्य के प्रति निष्ठा, अहिंसा, अपरिग्रह, स्वतंत्र चिन्तन, स्पष्ट अभिव्यक्ति, संवेदनशीलता, निर्भीक वृत्ति, न्याय निष्ठा, प्रकृति के प्रति सामंजस्य, स्वावलंबन तथा स्वाभिमान आदि गुणों का विकास होता है। शिक्षा संकटमय परिस्थितियों में सफलता प्राप्त करने की क्षमता बढ़ाती है तथा जीवनव्यापी दृष्टि प्रदान करती है।

भूमिका
बालकों का सर्वांगीण विकास करना प्रत्येक अभिभावक, परिवार, समाज एवं राष्ट्र का प्रमुख कर्तव्य है। यदि माता–पिता बालकों की सीमा, रूचियों, क्षमताओं एवं योग्यताओं को ध्यान में रखते हुए उसे उनके अध्ययन के प्रति प्रोत्साहित करें एवं उसकी शिक्षा में यथा सम्भव स्वयं सहभागी बने तो निश्चय ही बालक अपनी शिक्षा के सन्दर्भ में धनात्मक विचारधारा बनाएंगे तथा माता–पिता का स्नेह, प्रोत्साहन एवं सहभागिता प्राप्त कर दृढ़ शैक्षिक आधार स्थापित कर स्वयं अध्योन्मुख होंगे। तदिभन्न बालक की शैक्षिक क्रियाओं में माता–पिता की सहभागिता एवं प्रोत्साहन के अभाव में बालक की शिक्षा के प्रति दृष्टिकोण बिल्कुल नकारात्मक व विपरीत हो सकता है।

अतः बालक ही स्वीकार्य एकाग्रता, माता–पिता की सहभागिता, प्रेरणा, सहयोग, सहानुभूति एवं उत्साहवर्धन सभी कारक उसकी शैक्षिक उपलबिध के आवश्यक अंग परिवार समाज रूपी भवन की नींव का पत्थर है, जिसकी उपस्थिति सार्वभौमिक है चाहे वह आधुनिक हो या प्राचीन, शहरी हो या ग्रामीण 'कूले' इसे एक ऐसा प्राथमिक समूह मानते हैं जो मानव स्वभाव की पेशिका है तथा सिडनी ई. गोल्डस्टोन लिखते हैं कि परिवार वह झूला है जिसमें भविष्य का जन्म होता है, बालक का जन्म परिवार में होता है।

जन्म के समय सभी बालक एक समान होते है उनमें जातिगत, आर्थिक आदि रूप से कोई अन्तर नहीं होता परन्तु जन्म के पश्चात् बालक के सम्पूर्ण विकास में परिवार की महत्वपूर्ण भूमिकाएँ होती है।

बालकों के विचार–व्यवहार एवं गुण उसके परिवार के अनुसार ही प्रतिबिम्बित होते है। इसमें कोई सन्देह नहीं है कि बच्चों के विकास में आनुवंशिकी भी महत्वपूर्ण भूमिका निभाती हैं परन्तु इससे परिवार के वातावरण की महत्ता कम नहीं होती। परिवार को बच्चों की प्रथम पाठशाला में रूप में स्वीकार किया गया हैं इसलिए परिवार को बच्चों के सम्पूर्ण विकास की प्रथम सीढ़ी माना जाता है क्योंकि उसी के अनुसार बच्चों का सामाजिक, शारीरिक, मानसिक, आर्थिक एवं आध्यात्मिक विकास होता हैं।

व्यक्ति की प्रथम आवश्यकता घर से पैदा होती है यदि गृह न होता, तो हम क्या होते? कुछ नहीं कहा जा सकता। परिवार को यदि संक्षिप्त रूप में परिभाषित करें तो कह सकते है कि– परिवार एक या एक से अधिक दम्पत्तियों एवं उनसे उत्पन्न बच्चों का वह सामाजिक समूह है जिसके सभी सदस्य एक स्थान पर रहकर संयुक्त उत्तरदायित्व का निर्वाह करते हैं एवं अपना जीवन चलाते है।

अधिकांशतः समाजशास्त्री और मनोवैज्ञानिक वातावरण को एक–दूसरे का पर्यायवाची मानते है। परन्तु परिस्थितयों के आधार पर इनको विभाजित किया जा सकता है। जैसे–प्राकृतिक परिस्थितियों को हम पर्यावरण कह सकते है जिसमें भूमि, नदी, पहाड़, शीत, ताप, वर्षा आदि सम्मिलित किया जाता है और सामाजिक परिस्थितियों को वातावरण कह सकते है जिसमें विभिन्न प्रकार के सामाजिक संगठन जैसे गृह, विद्यालय, समुदाय, धार्मिक, संस्थाएँ आदि प्रमुख होते है। वातावरण/पर्यावरण का साधारण अर्थ चारों ओर की परिस्थितियों से है जो मनुष्य की ज्ञानेन्द्रियों को प्रभावित करती है और मनुष्य पर इसकी प्रतिक्रिया भी होती है जो वाह्य परिस्थितियाँ मनुष्य की ज्ञानेन्द्रियों को प्रभावित नहीं करती। वह वातावरण का अंग भी नहीं होती है।

वातावरण के सम्बन्ध में वास्तव में यह कोई वाह्य शक्ति है जो हमारी ज्ञानेन्द्रियों को प्रभावित करती है। इस सम्बन्ध में डगलस और हालैण्ड का मत है कि– वातावरण शब्द का प्रयोग उन सब वाह्य शक्तियों, प्रभावों और दशाओं का

सामूहिक रूप से वर्णन करने के लिए किया जाता है जो जीवित प्राणियों के जीवन, स्वभाव, व्यवहार, बुद्धि विकास और परिपक्वता पर प्रभाव डालते है। गृह पर्यावरण से अभिप्राय है कि वह मानव निर्मित या सामाजिक पर्यावरण जो . परिवार के समस्त सदस्यों को अपनी परिधि में ढ़के हुए होता है। खासतौर पर बालक के विकास के परिप्रेक्ष्य में इसका आशय घर के उस मनोसामाजिक वातावरण से है जो बच्चों द्वारा प्रत्यक्षीकरण किया जाता है।

कोई बालक जब घर में जन्म लेता है तो वह तत्काल कुछ नहीं कर पाता है। परिवार के सदस्य उसका पालन–पोषण करते हैं उसकी सेवा–सुश्रूषा करते हैं घर में उसका विकास होता है काफी दिनों तक वह असहाय रहता है वह अपने माता–पिता तथा परिवार के सदस्यों पर आश्रित रहता हैं।

प्रत्येक बालक स्नेह का भूखा होता है। प्रत्येक माता–पिता अपने बच्चों को पर्याप्त स्नेह देते है। इनके साथ–साथ परिवार के अन्य सदस्य भी बच्चों को स्नेह प्रदान करते हैं। यह स्नेह उनके व्यक्तित्व के निर्माण में सहायक होते हैं। स्नेह के जीवन में आशा का संचार होता है।

स्नेह के अभाव में जीवन सूना रह जाता है स्नेह के अलावा बच्चों की अन्य आवश्यकताओं की ओर ध्यान देना और पूर्ति करना हितकर होता है। बाल व्यक्तित्व के समुचित विकास के लिए जैसा घर वैसा बालक वाली कहावत बिल्कुल सही है। पेस्टालॉजीश ने गृह को शिक्षा का सर्वोत्तम स्थान और बालक का प्रथम पाठशाला माना है, और इस पाठशाला में बालक के लिए माता उसकी प्रथम शिक्षिका होती है। शिक्षा की दृष्टि से गृह पर्यावरण का प्रभाव बालक के लिए अत्यन्त महत्वपूर्ण है। जीवन की मूल प्रवृत्तियों की सन्तुष्टि तथा विकास गृह वातावरण में ही सम्भव है। सामाजिक, नैतिक, सांस्कृतिक गुणों को वह गृह के सदस्यों तथा वातावरण के बीच रहकर अधिगम करता है। गृह के प्रत्येक सदस्यों को एक आदर्श आचरण उपस्थित करना चाहिए ताकि बालक पर उसका प्रभाव लाभदायक हो। गृह में रहकर ही बालक भाषा, भोजन, वेशभूषा, भजन व भाव माता–पिता एवं अन्य सदस्यों से ग्रहण करता है और यहीं पर पारिवारिक रीति, रिवाज, सामाजिक परम्परा आदि के विषय में ज्ञान प्राप्त करता है। नैतिक गुणों के रूप में सत्यता, स्नेह, सौहार्द, सदाचरण आदि का विकास गृह द्वारा ही होता है। गृह जीवन में मानवीय जीवन का विकास होता है। इसके लिए गृह में सुव्यवस्था तथा अनुकूल वातावरण और मनोवैज्ञानिक एवं शैक्षिक वातावरण का होना आवश्यक है।

गृह वातावरण के प्रभाव को स्पष्ट करते हुए माष्टेसरीश ने विद्यालय में गृह वातावरण की ही भाँति प्रेमयुक्त वातावरण बनाने का सुझाव दिया और विद्यालयों को बालकों का गृह कहा है।

आज संयुक्त राष्ट्र संघ द्वारा की गयी घोषणा के अनुसार विश्व में अन्तराष्ट्रीय बाल वर्ष 1979 से मनाया जा रहा है। हमारे देश में स्व. पं. जवाहर लाल नेहरू जी के जन्मदिन को भी बाल दिवस 14 नवम्बर को मनाया जाता है। विज्ञान का भी यही मानना है कि जिस दिन एक बच्चा मॉ के गर्भ में आता है काफी गुण वह अपने माता–पिता से जीन द्वारा उसी दिन प्राप्त कर लेता है। फिर दिन–प्रतिदिन माता के गर्भ से उसका विकास होने लगता है। वह अपने आस–पास के वातावरण को सुनता व समझता है। महाभारत ग्रन्थ के अनुसार, अर्जुन पुत्र अभिमन्यु ने चक्रव्यूह का तोड़ अपनी माता के गर्भ में होने के दौरान ही सीखा था।

बालक के जीवन में माता–पिता व परिवार का मुख्य योगदान होता है। इसीलिए माता बच्चे की प्रथम गुरू व परिवार बालक की प्रथम पाठशाला कहलाता है।

बालक के विकास के लिए बालकों तथा माता–पिता के बीच जो सम्बन्ध अत्यन्त सहायक होता है, वह है प्रेम का, विश्वास का और स्वीकृति का सम्बन्ध है। माता–पिता बालक के लिए व्यवस्था और योजना बनाते है वह उसे सुरक्षा देते है, मित्रता देते है, खेलने के लिए समय और उपकरण देते है।

बालक का विकास एक सतत् प्रक्रिया है जो समय तथा शिक्षा व्यवहार बालक अपने माता–पिता के साथ–साथ समय व्यतीत करते हुए सीखते हैं। उसके प्रभाव बालक के जीवन तथा चारित्रिक व्यवहार पर स्पष्ट देखने को मिलता है।

बालक के विद्यालय कार्य एवं उसके रूचि, विषयों में भाग लेना माता–पिता की नैतिक जिम्मेदारी होती हैं। यदि माता–पिता, शिक्षा पद्धति के प्रति रूचि दिखाते है, पेरेन्टस डे पर बढ़–चढ़ कर हिस्सा लेते है तो निश्चित रूप से यह सराहनीय कार्य होता है। माता–पिता द्वारा बच्चों की विविध शैक्षिक क्रियाओं, गृहकार्य सम्बन्धी समस्याओं को सुलझाना, समय–सारिणी निर्धारित करना, वैकल्पिक विषय के चयन में निर्देशन, पाठ्यगामी सहक्रियाओं में प्रत्यक्ष या अप्रत्यक्ष रूप से सहगामी होने को ही शैक्षिक सहभागिता कहा जाता है।

विद्यालय समाज का मस्तिष्क है। विद्यालय ऐसी संस्था है, जिनको मानव ने इस उद्देश्य से स्थापित किया है कि समाज में ऐसे योग्य सदस्य तैयार करने में मदद मिले जो समाज को विकसित कर सके। समाज तथा राष्ट्र के विकास में विद्यालय का महत्वपूर्ण स्थान है। विद्यालय ही वह स्थान है जहाँ बालकों के सामाजिक, मानसिक, शारीरिक, नैतिक एवं भावनात्मक विकास की आधारशिला, जो परिवार द्वारा रखी जाती है, उसका परिष्कार होता है। विद्यालय केवल भवन नहीं है, जिसमें शिक्षक विद्यार्थियों को शिक्षा देने का कार्य करता है, बल्कि विद्यालय ज्ञान, कला, विज्ञान व संस्कृति का गतिशील केन्द्र है जो बालकों में जीवन शक्ति का संचार करता है। सुसंचालित विद्यालय एक पवित्र मंदिर है, जो बालक के व्यक्तित्व को संतुलित बनाता है तथा उसकी जन्मजात शक्तियों के प्रस्फुटन के लिए उपयुक्त वातावरण प्रदान करता है।

प्रत्येक व्यक्ति अपने आस–पास के वातावरण से प्रत्यक्ष अथवा अप्रत्यक्ष रूप से प्रभावित होता है। विद्यालयीय वातावरण भी इसका अपवाद नहीं है। विद्यालय का सम्पूर्ण वातावरण बालकों पर अपना प्रभाव डालता है। विद्यालय भवन, विद्यालय का व्यवहार और दृष्टिकोण, अध्ययन के उपकरण, पुस्तकालय, प्रयोगशाला आदि बालकों को शैक्षणिक अनुभव प्रदान करने में सहायक होते है। विद्यालय भवन में व्याप्त अस्वच्छता, अवस्तरीय पुस्तके, बड़ी कक्षाएं, प्रभावहीन अध्ययन विधियॉ, आतातायी अनुशासन, विषयों के चुनाव में मार्गदर्शन का अभाव, शैक्षणिक गुणवत्ता को प्रभावित करता है। बालक में जिज्ञासा, स्वतंत्र चिन्तन, समस्या समाधान की योग्यता के विकास के लिए योजकता, स्वाध्याय क्रिया आधारित अनुभूति ज्ञान, श्रम निष्ठा, सत्यान्वेषण, वैज्ञानिक दृष्टि आदि का होना आवश्यक है। यह तभी सम्भव है जब विद्यार्थियों को उत्तम विद्यालयीय वातावरण में शिक्षा दी जाये।

विद्यालय एक सुधार केन्द्र है, जहाँ छात्र गरिमामय जीवन कला में प्रशिक्षण प्राप्त करता है। आर्थिक, सांस्कृतिक और संवेगीक रूप से वंचीत बच्चों के अभाव की पूर्ति का प्रयास विद्यालय को सजग रहकर अपने कार्यक्रम में तद्नुरूप परिवर्तन करने के लिए तत्पर रहना चाहिए। किसी भी संस्था या संगठन की सफलता उसकी प्रशासन प्रक्रिया पर आधारित होती है। अध्यापकों की योग्यता के अनुसार कार्य का विभाजन तथा उपलब्ध शैक्षिक सहायक सामग्री का समन्वित उपयोग करना शैक्षिक प्रशासन का महत्वपूर्ण कार्य है। विद्यालय संगठन के विभिन्न घटकों के बीच समन्वय का कार्य प्रशासन द्वारा किया जाता है। विद्यालय घटकों के बीच समन्वय अर्थात् उत्तम प्रशासन उपयुक्त विद्यालयीय वातावरण के निर्माण में सहायक होता है।

परिवार में बूढे, जवान, पति–पत्नी तथा उनके बच्चे होते हैं।

ये सभी एक–दूसरे से माता–पिता, भाई–बहन, दादा–दादी, चाचा–चाची अथवा किसी अन्य सम्बन्धों से बंधें होते हैं। इसे ही परिवार कहते है। पहले के समय में नौकरों को भी घर का सदस्य समझा जाता था, उसी आधार पर परिवार के अंग्रेज़ी शब्द 'फैमिली'' की उत्पत्ति 'फैमूल्स'' शब्द से मानी जाती है जिसका अर्थ है नौकर ;मतअंदजद्ध अर्थात घर में रहने वाले प्रत्येक सदस्य वह नौकर हो या मालिक, यदि मिलझुलकर, एकजुट होकर जीवन की गतिविधियों को ठीक से निभाते हैं तो उसे हम परिवार नहीं मन्दिर की संज्ञा देते है और उस मन्दिर रूपी परिवार में ही सबसे पहले बच्चा अपनी आँखे खोलता है, जहां बालक को प्यार और सुरक्षा मिलती है वही उसका पोषण तथा विकास होता है जो बालक के जीवन को प्रभावित करती है अर्थात् बच्चे की जीवन बगिया की सुंदरता को परिवार ही बनाता है। हम कह सकते है कि नवजात शिशु अपने जीवन की यात्रा परिवार से ही प्रारम्भ करता है तथा इसी संस्था में सुनना, उठना–बैठना, बोलना, चलना–फिरना तथा खाना–पीना जैसे सामाजिक आचरण की विधियॉ परिवार में ही सीखने को मिलती हैं। उसके ऊपर उसके मॉ–बाप, दादा–दादी, भाई–बहन के व्यवहार और भाषा का भी प्रभाव पड़ता है। यदि बालक अच्छा सुयोग्य चरित्रवान होता है तो हम कहते है कि यह बालक अच्छे परिवार से है, इसको संस्कार ही ऐसे मिले हैं, यह अच्छे परिवार से संबंधित है और अगर खराब होते है तो हम कहते हैं उसके संस्कार अच्छे नहीं है, वह अच्छे परिवार से सम्बन्ध नहीं रखता है अर्थात् जब तक बालक जीवित रहता है तब तक परिवार उसको प्रभावित

करता है अतः हम मानते हैं कि परिवार के सदस्य, माता–पिता, दादा–दादी, भाई–बहन तथा अन्य रिश्तेदारों का सहयोग बालक के विकास में ठीक ढंग से होता है तो उसका विकास उचित दिशा में होता है तथा वह अपने जीवन के लक्ष्य को ठीक से प्राप्त कर लेता है और अगर ठीक नहीं होता है तो लक्ष्य प्राप्ति में कठिनाई होती है।

प्रत्येक समाज के अपने कुछ नियम और सिद्धान्त होते हैं। इन नियमों के पालन की नैतिकता तथा सिद्धान्तों के अनुसार आचरणों का पालन करने वाली शक्ति को चरित्र कहते हैं। बालक व समाज को तब तक हम सफल या सुसंस्कृतपूर्ण नहीं कह सकते जब तक उनमें नैतिकता व चरित्र के गुण ना डले हुए हो। परिवार बालक में नैतिक मूल्यों का विकास करने में भूमिका निभाता है। यदि घर के सदस्य नैतिकता का रास्ता अपनातें हैं तो उनका अनुकरण करने वाले बच्चे नैतिकता का सच्चा पाठ पढेंगें। ऐसे घरों के बच्चे, बड़ों की आज्ञा पालन, सत्य बोलना, ईमानदारी तथा परोपकार जैसे गुणों को ग्रहण करते है।

निष्कर्ष

अतः परिवार बालक के व्यक्तित्व के निर्माण में भी पूरी जिम्मेदारी निभाता है। परिवार के प्रतिमान जिस प्रकार के होते हैं उसी तरह का बालक का व्यक्तित्व होता है। अगर बालक संयुक्त परिवार में पलता है तो वह बच्चा समूह में रहना तथा सभी की मदद करने के लिए हमेशा तैयार रहता है, यदि बालक एकाकी परिवार में पलता है तो वह अलग–अलग रहना तथा अपनी समस्याओं को दूसरों को बताने में हमेशा संकोच करता रहेगा। एकाकी परिवार में रहने वाले बालक की सभी आकांक्षाओं की पूर्ति होने के कारण उसका अलग व्यक्तित्व बनता है तथा संयुक्त परिवार में रहने वाले बालक की सीमित आकांक्षाऐं पूर्ति होती हैं, इससे उनका अलग व्यक्तित्व बनता है। बालक में अच्छे सांस्कृतिक गुणों का विकास करना भी परिवार की जिम्मेदारी है। बालक जिस परिवार में जन्म लेता है, उसी परिवार की वेशभूशा, खान–पान, रहन–सहन वह ग्रहण करता है, क्योंकि परिवार ही एक पीढ़ी से दूसरी पीढ़ी तक सांस्कृतिक तत्वों को हस्तांतरित करता है। बचपन में परिवार के द्वारा सिखाएँ गए रीति–रिवाज और संस्कार बालक के जिन्दगी भर काम आते हैं, क्योंकि देश की संस्कृति को बनाए रखना एक व्यक्ति की जिम्मेदारी है और वो जिम्मेदारी निभाना उसे परिवार ही सिखाता है। अगर परिवार के लोग खुद एक–दूसरे से प्रेम नहीं करते अर्थात् उनके पारिवारिक सम्बन्ध अच्छे नहीं है तो ऐसे परिवार अपने बच्चों को भी समाजिकता का पाठ नहीं पढ़ा सकेंगे। उन्हें परिवार कहना उचित नहीं है और जो परिवार अपने बच्चों को समाज, घर, स्कूल में प्यार से रहना सिखाते हैं, तो ऐसे परिवार संस्कारी परिवार कहलाते हैं।

संदर्भ सूची

1. रामशकल पांडे – शशिक्षा की समसामयिक समस्यायेंश विनोद पुस्तक मंदिर, आगराए 2002
2. भानु प्रताप सिंह – (सहायक क्षेत्रीय निरेशक, इग्नु क्षेत्रीय केन्द्र, अलीगढ़) परिवार बच्चों के सम्पूर्ण विकास की प्रथम सीढ़ी के रूप में बच्चों का सर्वांगीण विकास ैवनअमतदपत ;न्ळब छंजपवदंस ैमउपदंतद्ध थ्ंउपसल – ।`जमचचपदह`जवदम पद ीवसपेजपब कमअमसवचउमदज व िबीपसकण् 2005
3. सरयू प्रसाद चौबे – शिक्षा के समाजशास्त्रीय आधार, विद्यार्थी प्रकाशन गोरखपुर 1992
4. पी.डी. पाठक व त्यागी – शिक्षा के सिद्धांत, विनोद पुस्तक मंदिर आगरा 2002
5. डॉ. मधुबाला गुप्ता– बालक के विकास में परिवार व विद्यालय की भूमिका, लैब सहायक, गृह विज्ञान (रा.मा.दे. महिला, महाविद्यालय विजनौर)
6. श्रीमती मंजू त्यागी – बाल विकास में परिवार का योगदान, प्रवक्ता टैक्सटाइल डिजाइनिंग, चित्रकला विभाग बाल विकास में परिवार का योगदान 2002
7. फ्रीमैन उद्धृत एस.पी. गुप्ता – शिक्षा में मापन तथा मूल्यांकन, शारदा प्रकाशन, इलाहाबाद 2003
8. सी.वी. गुड उद्धृत उमेश चन्द्र कुदेशिया– शिक्षा प्रशासन, लायल बुक डिपो मेरठ 2002